P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-8* (Part-1) April- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

प्रेमचन्द का नारी–विषयक दृष्टिकोण : मालती के सन्दर्भ में

पूनम काजल
असिस्टेंट प्रोफ़ेसर,
हिन्दी विभाग,
हिन्दू कन्या महाविद्यालय,
जींद, हरियाणा
भारत

सारांश

कोई भी जागरूक साहित्यकार अपने युग के ज्वलंत प्रश्नों और अन्तर्विरोधों से सर्वथा निरपेक्ष रहकर साहित्य–सृजन नहीं कर सकता। प्रेमचन्द के उपन्यासों में भी तत्कालीन सामाजिक जीवन की नाना समस्याओं, असंगतियों, अनीतियों तथा कुप्रथाओं का यथार्थ एवं प्रभावपूर्ण चित्रण हुआ है। समाज के पाप और कुसंस्कार, धर्म के पाखंड, राजनीति के स्वार्थपूर्ण हथकण्डे–समाज की इन भिन्न–भिन्न समस्याओं को उन्होंने अत्यन्त मानवीय सहानुभूति के साथ दर्शाया है। इन सबसे आगे बढ़कर उनकी पैनी दृष्टि 20वीं शती के पूर्वार्द्ध की लक्ष्मी, देवी और माता आदि उपाधियों से विभूषित उन नारियों तक भी पहुँची है जिनकी वास्तविक स्थिति एक दासी से अच्छी न थी। उन्होंने अपनी अनेक रचनाओं में तत्कालीन नारी–जीवन की विविध समस्याओं को एक चुनौती की तरह उठाया है। सत्य तो यह है कि प्रेमचन्द ने अपने उपन्यासों में नारी को सीमित और संकुचित क्षेत्र से बाहर निकालकर उसके जन्म–जन्मान्तर के संस्कारों पर गहरा आघात किया है।"[1] उन्होंने अपने उपन्यास–साहित्य में नारी की सामाजिक परिधि को विस्तृत कर उसे नव्य चेतना से अनुप्राणित किया है।

मुख्य शब्द : स्वतन्त्र–चेता, निर्द्वन्द्व, वर्जनाओं, वीत राग, उच्छृंखल।

प्रस्तावना

'गोदान' मुंशी प्रेमचन्द जी का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास है, जिसमें उनकी व्यापक मानवीय दृष्टि और यथार्थवादी चेतना समग्र रूप में दृष्टिगोचर होती है। उनकी यह चेतना परिवार, जाति, धर्म आदि से ऊपर उठकर एक व्यापक सामाजिक चेतना का निर्माण करती है। यहाँ तक आते–आते उनकी मानसिकता नारी के प्रति भी पूर्णरूपेण जागरूक दिखाई देती है। जहाँ गोदान–पूर्व के उपन्यासों में वे नारी–पात्रों को एक कठपुतली की तरह नचाते हैं, वहीं 'गोदान' के नारी–पात्र बार–बार उनके हाथ से छूटकर अपनी दिशा स्वयं निर्धारित करते हैं। 'निर्मला' के सन्दर्भ में उनकी यह उक्ति कि 'बेटी बिन सींगों की गाय है– सार्थक प्रतीत होती है, लेकिन 'गोदान' तक आते–आते बेटी बिन सींगों की गाय नहीं रहती। यहाँ वह क्रांति का झंडा लेकर जड़ समाज–व्यवस्था व रूढ़ियों को जड़–मूल से उखाड़ने को तत्पर दिखाई देती है। प्रेमचन्द जी ने 'गोदान' के नारी–पात्रों को बँधी–बँधाई सीमाओं से निकालकर अधिक व्यापक भावभूमि पर खड़ा किया है। 'गोदान' के शिक्षित नारी–पात्रों के साथ–साथ यदि हम धनिया, सिलिया जैसी अशिक्षित नारी–पात्रों का विश्लेषण करें, तो पाएँगे कि 'गोदान' में नारी–मुक्ति की गूँज सर्वत्र सुनाई देती है।

अध्ययन का उद्देश्य

'गोदान' के अधिकांशतः नारी–पात्र अपने अस्तित्व के प्रति पूर्णरूपेण सचेत हैं। संघर्ष के खिलाफ विद्रोही भावों की गूँज इन सभी स्त्री–पात्रों में दिखाई देती है। चाहे अशिक्षित नारियाँ हो या शिक्षित–सभी अपने–अपने स्तर पर अपने अस्तित्व–निर्माण के लिए संघर्षरत हैं। शिक्षित नारी–पात्रों में मालती एक ऐसी नारी है, जिसका व्यक्तित्व एक सुशिक्षित और चेतना–सम्पन्न, स्वतन्त्र नारी का व्यक्तित्व है। यदि हम नारीवादी दृष्टि से देखें, तो प्रारम्भ में मालती का चरित्र अपेक्षाकृत अधिक सहज लगता है। हालांकि बाद में कहीं–कहीं वह हमें आरोपित और अस्वाभाविक–सा लगता है। पाश्चात्य शिक्षा के प्रभावस्वरूप उसकी उन्मुक्त विचारधारा के कारण ही प्रेमचन्द जी ने उसे तितली कहा है, लेकिन सत्य तो यह है कि वह अपने व्यक्तित्व को प्रतिपादित करना चाहती है। एक 'मादा' या एक 'वस्तु' से भिन्न उसका अपना एक स्वतन्त्र व्यक्तित्व है। अपनी आधुनिक दृष्टि के कारण ही वह पुरुष मैत्री को हेय नहीं समझती, जिस कारण वह पुरुष–समाज में निःशंक उठती–बैठती है। उसके चरित्र का एक महत्वपूर्ण

पक्ष और भी है कि अपने नारीत्व का ज़रा–सा अपमान भी वह सहन नहीं कर सकती। न तो वह छुई–मुई है और न ही इतनी कमज़ोर कि कोई उसके नारीत्व पर दानव–सा टूट पड़े। उज्जड़ पठान के रूप में मेहता के मुख से अपने लिए अपशब्द सुनना उसे कतई गवारा नहीं। वहाँ एकत्रित पुरुष वर्ग को निष्क्रिय देखकर उसका खून खौल उठता है, क्रोध से उसका चेहरा तमतमाने लगता है। वहाँ एकत्रित पुरुषों के पुरुषत्व पर तीखा प्रहार करती हुई वह कहती है "..... मेरी इतनी बेइज्ज़ती हो रही है और आप लोग बैठे देख रहे हैं। बीस मर्दों के होते एक उजड्ड पठान मेरी इतनी दुर्गति कर रहा है और आप लोगों के खून में ज़रा भी गर्मी नहीं आती। आपको जान इतनी प्यारी है?.....।"[2]

वस्तुतः मालती किसी भी स्वाभिमानिनी, स्वतन्त्र–चेता, निर्द्वन्द्व आधुनिका से कम नहीं, वरन् ऐसी आधुनिकाएँ समकालीन कथा–साहित्य में कम ही मिलती हैं। प्रायः उनमें संस्कार व आधुनिकता का, शिक्षा और सामाजिक दबावों का, वर्जनाओं और कामनाओं का दबाव रहता है। अतः उनके आचरण में मालती की–सी सहजता दृष्टिगोचर नहीं होती। उनमें फूँक–फूँक कर कदम रखने की चेष्टा (ठीकरे की मंगनी–नासिरा शर्मा) या आहत होकर विद्रोह का बिगुल बजाने की बाध्यता (छिन्नमस्ता–प्रभा खेतान) स्पष्ट परिलक्षित होती है।

मालती एक कामकाजी नारी है। घर के संपूर्ण दायित्वों का बखूबी निर्वाह करते हुए वह अपने चिररोगी असहाय पिता को चिन्तामुक्त रखना चाहती है। "..... सारा दायित्व मालती पर आ पड़ा ..... दोनों लड़कियों की शिक्षा होती जाती थी और भले मानसों की तरह जिन्दगी बसर होती थी। मालती सुबह से पहर रात तक दौड़ती रहती थी।[3]

आर्थिक स्वावलम्बन के कारण उसमें आत्मविश्वास कूट–कूट कर भरा है। यहाँ हमें मालती के कामकाजी रूप में परिवार के पोषण के उन नए दायित्वों का वहन देखने को मिलता है, जो परवर्ती उपन्यासों में केन्द्रीय समस्या के रूप में उभर कर सामने आए हैं।

जब नारी घर की चारदीवारी लांघकर अर्थोपार्जन के उद्देश्य से बाहर कदम रखती है, तो उसके सहयोगी पुरुषकर्मी और संपर्क में आने वाले अन्य पुरुष गलतफहमी का शिकार हो कर किस प्रकार आचरण करते हैं, यह समस्या आज के सन्दर्भ में कितनी ज्वलंत है? इसका हम सहज ही अनुमान लगा सकते हैं। ऐसी अवस्था में नारी अपनी कमनीयता छोड़कर अपने स्त्रीत्व की रक्षा के लिए सन्नत हो जाती है, तब उसका अबला नहीं, बल्कि सबल रूप दृष्टिगोचर होता है। मालती के स्वच्छन्द व्यवहार के कारण खन्ना गलतफहमी का शिकार होता है, लेकिन मालती अपनी विवेकबुद्धि द्वारा उसकी गलतफहमी दूर करती हुई कहती है– "मैं रूपवती हूँ। तुम भी मेरे अनेक चाहने वालों में से एक हो। यह मेरी कृपा थी कि जहाँ मैं औरों के उपहार लौटा देती थी, तुम्हारी सामान्य–से–सामान्य चीज़ें भी धन्यवाद के साथ स्वीकार कर लेती थी ..... अगर तुमने अपने धनोन्माद में इसका कोई दूसरा अर्थ निकाल लिया, तो मैं क्षमा करूँगी। यह पुरुष–प्रकृति है, अपवाद नहीं .....।"[4]

सत्य तो यह है कि मालती का स्वच्छन्द और कामकाजी रूप आज के सन्दर्भ में तो सम्माननीय हो सकता है, लेकिन तत्कालीन समाज की दृष्टि में यह काम्य नहीं था। कदाचित लेखक को यह तत्कालीन युग के अनुसार अस्वाभाविक–सा लगा होगा। सम्भवतः इसी सामाजिक दबाव के कारण प्रेमचन्द जी ने मालती के चरित्र के सहज विकास में हस्तक्षेप कर उसे एक आदर्श चरित्र के रूप में परिवर्तित कर उसे मधुमक्खी का नाम दे दिया। इसी आदर्श रूप (मधुमक्खी) की सृष्टि हेतु लेखक की दृष्टि उसकी कर्तव्यपरायणता पर ही केन्द्रित रही है, जिसके केन्द्र में बीज रूप में सेवापरायणता ही विद्यमान है। यही उसकी कथायात्रा का प्रस्थान बिन्दु है। इसी के आर–पार मालती के चरित्र का विकास होता है। इसी बिन्दु को उभारने के लिए, मालती में जन–सेवा के भावों की सृष्टि करने के लिए मेहता के प्रति आकर्षण की सृष्टि की गई है। प्रेमचन्द जी ने मेहता के प्रति आकर्षण की सृष्टि मालती के लिए प्रेरक शक्ति के रूप में की है जो अज्ञात रूप में उसे गति और शक्ति देकर उसके सद्विचारों को उभारने में सहायता करता है। मेहता की दृष्टि में मालती को सम्मानित दर्जा प्राप्त नहीं। उनके विचारों को जानकर उसके भीतर की नारी एक घनीभूत पीड़ा से भर उठती है। मेहता का सम्बल पाने की आशा में उसका चारित्रिक परिवर्तन आरम्भ होता है। मेहता की इसी प्रेरक शक्ति ने उसके सम्मुख जीवन का एक नया आदर्श प्रस्तुत किया, जिसे ग्रहण कर वह सेवा और त्याग के पथ पर अग्रसर हुई। प्रेमचन्द जी उसके चारित्रिक परिवर्तन पर टिप्पणी करते हुए लिखते हैं– ".....मेहता के संसर्ग में आकर उसकी त्याग–भावना सजग हो उठी थी ..... मालती अब अक्सर गरीबों के घर बिना फीस लिए मरीजों को देखने चली जाती थी, मरीजों के साथ उसके व्यवहार में मृदुता आ गई थी.....।"[5]

मेहता के पत्नी–विषयक विचारों को जानने के पश्चात् तो उसके चरित्र का उदात्त पक्ष प्रस्फुटित होने लगता है और नवयुग की साक्षात प्रतिमा से वह वीतराग आदर्श समाज सेविका बन जाती है। मेहता के सांस्कृतिक आदर्शों से प्रभावित मालती अपने मानवतावादी दृष्टिकोण के बल पर ही नारीत्व के उच्चादर्श को प्राप्त कर लेती है। यहाँ हमें मालती के चरित्र में एक आधुनिक नारी के दृढ़ संकल्प और ठोस इरादों की झलक मिलती है। यहाँ तक लेखकीय हस्तक्षेप के बिना मालती के चरित्र का सहज–स्वतन्त्र विकास होता है। इसके पश्चात् लेखकीय हस्तक्षेप के कारण उसके चरित्र में कृत्रिमता और अस्वाभाविकता का आरोपण परिलक्षित होता है। जो मालती मेहता के प्रेम के वशीभूत होकर स्वयं को उनके अनुरूप परिवर्तित कर लेती है, बाद में वही मेहता को ठुकरा देती है। यही परिवर्तन आकस्मिक एवं अस्वाभाविक–सा लगता है। यहाँ प्रेमचन्द मालती के व्यक्तित्व को दबाने की चेष्टा करते हैं। इस स्थल पर मालती का कठपुतली रूप ही अधिक उभर कर आता है। वस्तुतः इसके पीछे प्रेमचन्द का अपना उद्देश्य निहित है। सच तो यह है कि वे शिक्षित भारतीय नारी के समक्ष मालती के माध्यम से एक आदर्श रखना चाहते हैं कि नारी को पुरुष के समानाधिकार मिलने चाहिएँ, किन्तु पाश्चात्य

सभ्यता का अनुकरण कर फैशन की पुतली बन कर विहार करना, समाज के नैतिक पतन का ही द्योतक होगा। इस स्थल पर लेखकीय हस्तक्षेप के कारण मालती के व्यक्तित्व की सहज ऊर्जस्विता क्षीण होती है, लेकिन मालती सीमाओं को तोड़कर अपने चरित्र का विकास करती है। परम्परागत मान्यताओं में ढलने का प्रयास करते हुए भी वह मेहता की प्रेम विषयक मान्यताओं को स्वीकार नहीं कर पाती। मेहता उससे पूछते हैं– "मान लो, मैं तुमसे विवाह करके कल तुमसे बेवफाई करूँ, तो तुम क्या सजा दोगी?" मालती इसकी सम्भावना से इनकार करती है। मेहता इस प्रश्न का उत्तर अपने दृष्टिकोण से देते हुए कहते हैं– "मैं पहले तुम्हारा प्राणान्त कर दूँगा, फिर अपना।" मेहता के इस जवाब से उसके श्रद्धा–भाव को बहुत बड़ा धक्का लगता है, मानो किसी शिष्य ने अपने गुरु को नीच कर्म करते देख लिया हो। मालती प्रेम को देह की वस्तु नहीं, अपितु आत्मा की वस्तु मानती है। मेहता और अपने प्रेम–सम्बन्धी दृष्टिकोण की भिन्नता को जानकर उसका आहत होना स्वाभाविक है। इस वैचारिक भिन्नता को जानकर अब प्रेम को लेकर उसकी अपनी निजी दृष्टि विकसित होती है। परम्परावादी विचारधारा को ध्वस्त करती हुई वह पुरुष के सहारे को नकारती हुई विवाह से इनकार कर देती है– "..... मैंने यह तय किया है कि मित्र बनकर रहना स्त्री–पुरुष बन कर रहने से कहीं सुखकर है। ..... अपनी छोटी–सी गृहस्थी बनाकर, अपनी आत्माओं को छोटे–से पिंजड़े में बन्द करके, अपने दुःख–सुख को अपने ही तक सीमित रखकर क्या हम असीम के निकट पहुँच सकते हैं?[6]

विवाह की आवश्यकता को एकदम नकार देना मालती के जागरूक एवं प्रखर व्यक्तित्व का ठोस प्रमाण है। उसकी मान्यता है कि विवाह मात्र सामाजिक–धार्मिक अनुष्ठान नहीं, पति के साथ बुद्धि व हृदय के मेल का नाम है। अपनी विवेक–सम्पन्नता के कारण मालती अनुभव कर लेती है कि मेहता से विचारों की विषमता के कारण उनका वैवाहिक जीवन सुखद नहीं हो सकता। इसी कारण वह विवाह की अनिवार्यता से इन्कार करती है। विवाह के सम्बन्ध में ऐसी स्पष्ट सोच एवं स्वतन्त्र फैसला आधुनिक नायिकाओं में भी बहुत कम देखने को मिलता है। अपने 'स्व' को पहचान कर मालती अपना अभीष्ट पाकर सन्तुष्ट है। वह जान जाती है कि विवाह नारी–जीवन की सार्थकता की अन्तिम कसौटी नहीं। इससे इतर भी नारी का एक निजी व्यक्तित्व है। मालती के चरित्र के माध्यम से प्रेमचन्द यह सन्देश देना चाहते हैं कि पुरुष के संबल के बिना भी नारी में स्वतन्त्र, सम्मानजनक जीवन जीने का आत्मविश्वास होना चाहिए, जिससे वह अपने ध्येय को पहचान कर अपने व्यक्तित्व को प्रतिपादित कर सके।

निष्कर्ष

प्रेमचन्द की दृष्टि में आधुनिक नारी का स्वच्छन्द आचरण भी समाज की एक प्रमुख समस्या है। स्वच्छन्दता के नाम पर शिक्षित नारियाँ तितली बनी हुई हास–विलास को ही अपने जीवन का लक्ष्य मान बैठती हैं। प्रेमचन्द जी ने नारी–शिक्षा पर बल अवश्य दिया है, लेकिन वे भारतीय आदर्शों में पली शिक्षित नारी के आदर्श रूप की सराहना करते थे और उसका पाश्चात्य रंग में रंगा जाना समाज के लिए घातक मानते थे। मालती के माध्यम से प्रेमचन्द जी ने यही दर्शाया है कि शिक्षित हो जाने से ही नारी का दायित्व समाप्त नहीं हो जाता। पश्चिमी शिक्षा के प्रभाववश उच्छृंखल हो जाना नारी–शिक्षा की सार्थकता नहीं। यही कारण है कि मालती के तितली रूप को वे सम्मान नहीं दे पाए। मेहता के आदर्शों के अनुरूप परिवर्तित हुई मालती ही उनकी दृष्टि में सम्माननीय है। पश्चिमी संस्कृति की चकाचौंध में भ्रमित हुई हिन्दुस्तान की हजारों शिक्षित नारियों को मालती का चरित्र निःसन्देह राह दिखाने वाला, प्रकाश और प्रेरणा देने वाला है।

पाद टिप्पणी

1. *डॉ0 सुरेन्द्रनाथ तिवारी, प्रेमचन्द और शरतचन्द्र के उपन्यास : मनुष्य का बिम्ब, सुषमा पुस्तकालय, कृष्ण नगर, दिल्ली, 1969, पृ0 213*
2. *प्रेमचन्द, गोदान, सरस्वती प्रैस, इलाहाबाद, 1976, पृ0 61–62*
3. *वही पृ0 132*
4. *वही पृ0 202*
5. *वही पृ0 255*
6. *वही पृ0 213*